भारत का निर्वाचन आयोग

बनाम

हरियाणा राज्य

(Election Commission of India

v.

State of Haryana)

(25 अप्रैल, 1984)

(मुख्य न्यायाधिपति वाई० वी० चन्द्रचूड़, न्यायाधिपति वी० डी० तुलजा-पुरकर, आर० एस० पाठक, डी० पी० मदान और एम० पी० ठक्कर)

संविधान, 1950—अनुच्छेद 226 और 324 निर्वाचन के लिए अधिसूचना के विरुद्ध रिट पिटीशन—हरियाणा विधान सभा के एक निर्वाचन-क्षेत्र में रिक्ति होना—निर्वाचन आयोग द्वारा उक्त रिक्ति को भरने के लिए उप-निर्वाचन की तारीख नियत की जाना और उप-निर्वाचन संबंधी अधिसूचना प्रकाशित करने का प्रस्ताव किया जाना—पड़ोसी पंजाब राज्य की घटनाओं के प्रभाव के आधार पर राज्य सरकार द्वारा अधिसूचना को उच्च-न्यायालय में चुनौती दी जाना—उच्च न्यायालय द्वारा एकपक्षीय आदेश दिया जाना—अधिसूचना के विरुद्ध एकपक्षीय स्थगन-आदेश अवैध है।

संविधान, 1950—अनुच्छेद 226 और 324—[सपठित लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 (1951 का 43) की धारा 30, 56 और 150]—विधान सभा के उप-निर्वाचन के लिए अधिसूचना जारी की जाना—राज्य सरकार और निर्वाचन आयोग के बीच विधि व्यवस्था की स्थिति की बाबत मतभेद होना—उच्च न्यायालय द्वारा अधिसूचना के विरुद्ध दिया गया स्थगन-आदेश अवैध है।

वर्तमान मामला हरियाणा के तौड़ू निर्वाचन क्षेत्र से निर्वाचित प्रतिनिधि के चुनाव को उच्च न्यायालय द्वारा अवैध घोषित करने के

परिणामस्वरूप हुई रिक्ति को भरने के लिए निर्वाचन आयोग द्वारा उप-निर्वाचन कराने से संबद्ध है। निर्वाचन आयोग ने देश में अन्य कई विधान सभाओं के उप-निर्वाचनों के साथ ही हरियाणा के उक्त निर्वाचन क्षेत्र से भी निर्वाचन कराने के लिए अधिसूचना जारी करने के लिए राज्य सरकार को सूचना निर्वाचन जारी करने के लिए कहा—हरियाणा सरकार ने पंजाब में चल रही असाधारण परिस्थिति का उस राज्य पर पड़ने वाले प्रभाव के आधार पर उक्त अधिसूचना के जारी किए जाने के विरुद्ध उच्च न्यायालय में पिटीशन फाइल किया और उच्च न्यायालय ने अधिसूचना जारी न करते हुए एकपक्षीय स्थगन आदेश जारी कर दिया। निर्वाचन आयोग द्वारा स्थगन आदेश के विरुद्ध अपील किए जाने पर, उच्चतम न्यायालय ने विशेष इजाजत दे दी। बहुमत के निर्णय द्वारा अपील मंजूर करते हुए।

अभिनिर्धारित—ऐसी स्थिति में पक्षकारों द्वारा एकपक्षीय आदेश प्राप्त करने की प्रचलित प्रथा का अनुमोदन करने से प्रायः इनकार किया जा चुका है जब वे विरोधी पक्षकार का बिना किसी विशेष असुविधा या प्रतिकूल प्रभाव के प्रस्तावित कार्यवाही की पूर्व सूचना दे सकते थे। जब लोक प्राधिकारी ऐसा करते हैं, तो उसका अनुमोदन न करने की और भी गुंजाइश रहती है, किन्तु यहां पक्षकारों ने ईंट का जवाब पत्थर से दिया है। हरियाणा सरकार ने हरियाणा उच्च न्यायालय से ऐसी स्थिति में एकपक्षीय आदेश प्राप्त किया जब कि वह आशयित कार्यवाही की बाबत निर्वाचन आयोग को पूर्व सूचना आसानी से दे सकती थी। आयोग का संवैधानिक दृष्टि से निश्चित रूप है और उससे सुविधापूर्वक सम्पर्क कियाजा सकता है तथा आधुनिकतम संचार-तंत्र के माध्यम से वह आसानी से सम्पर्क हेतु उपलभ्य है। भारत के निर्वाचन आयोग ने भी 18 अप्रैल, 1984 को हरियाणा सरकार को यह जानकारी दिए बिना इस न्यायालय में समावेदन किया कि वह उच्च न्यायालय के आदेश को चुनौती देना चाहता है और उस आदेश को स्थगित कराना चाहता है। हरियाणा राज्य को भी उतनी ही आसानी से अभिनिश्चित किया जा सकता है और सुगमतापूर्वक पहुंच की जा सकती है। (पैरा 6)

हरियाणा सरकार और मुख्य निर्वाचन आयुक्त के बीच जो मतभेद है वह इस प्रश्न पर केन्द्रित है कि क्या हरियाणा राज्य में विधि और व्यवस्था की स्थिति ऐसी है जिससे इस समय प्रस्तावित उप-निर्वाचन कराया जाना असमीचीन और अवांछनीय हो जाएगा। इस बात में कोई संदेह नहीं है कि हरियाणा सरकार अपनी अधिकारिता के भीतर और अपने नियंत्रण के

अधीन क्षेत्रों में विधि और व्यवस्था की स्थिति का मूल्यांकन करने के लिए बेहतर स्थिति में है। किन्तु किसी समय विशेष पर निर्वाचन कराया जाना संभव और समीचीन है या नहीं इसका अंतिम विनिश्चय करने का अधिकार निर्वाचन आयोग को होना चाहिए। यह सुझाव नहीं दिया गया है कि निर्वाचन आयोग अपने विवेकाधिकार का प्रयोग मनमानी और असद्भाव-पूर्ण रीति में कर सकता है। मनमाने पूर्ण और असद्भावपूर्ण होने से लोक प्राधिकारियों द्वारा पारित आदेशों की वैधता और उनका प्रभाव नष्ट हो जाता है। इसलिए यह आवश्यक है कि वर्तमान मामले जैसे किसी विषय पर जहां विधि और व्यवस्था की स्थिति से सम्बन्ध हो वहां निर्वाचन आयोग को चाहिए कि वह इस निष्कर्ष पर पहुंचने से पूर्व कि इस समय निर्वाचन कराने में कोई आपत्ति नहीं है वह राज्य सरकार तथा अन्य सम्बद्ध निकायों या प्राधिकारियों के दृष्टिकोण पर विचार करे। हरियाणा के मुख्य सचिव और मुख्य निर्वाचन आयुक्त के बीच हुए पत्र-व्यवहार से यह दर्शित होता है कि पश्चातवर्ती ने प्रस्तावित कार्यक्रम के अनुसरण में तौड़ू निर्वाचन-क्षेत्र में उप-निर्वाचन कराने की बाबत विनिश्चय करते समय समस्त सुसंगत तथ्यों और परिस्थितियों पर विचार किया है। पंजाब में तथा कुछ सीमा तक हरियाणा में विधि और व्यवस्था की जो स्थिति है वह इतना कुख्यात तथ्य है कि उसके आधार पर यह अभिनिर्धारित करना सहज है कि निर्वाचन आयोग उससे अवगत नहीं है। इस बात में कोई संदेह नहीं है कि इस विनिश्चय पर पहुंचने से पूर्व निर्वाचन आयोग ने अपने ध्यान में सम्पूर्ण परिस्थिति का परिणाम रखा होगा। उसके पास इसकी बाबत आंकड़े मौजूद हैं। यह उपधारणा नहीं की जा सकती कि उसने उसे नजरअंदाज कर दिया था। इन परिस्थितियों में यह विनिश्चय करना उच्च न्यायालय की शक्ति के अन्तर्गत नहीं था कि पंजाब-हरियाणा राज्य में विधि और व्यवस्था की स्थिति ऐसी थी या नहीं जिसमें उप-निर्वाचन न कराए जा सकें या उप-निर्वाचन कराने की अनुमति न दी जाए। (पैरा 8)

मुख्य निर्वाचन आयुक्त को इस बात की छूट है कि वह मतदान कराए जाने की समीचीनता की बाबत अपने विनिश्चय का पुनर्विलोकन कर सकता था। वस्तुतः, उसे न केवल अधिसूचना के अनुसार मतदान कराए जाने के अपने विनिश्चय का पुनर्विलोकन करने का अधिकार है अपितु स्पष्टतः उसका यह कर्तव्य और बाध्यता भी है कि वह परिस्थितियों की निरंतर संवीक्षा करता रहे जिससे कि परिस्थितियों की वास्तविकता के साथ अपने

1984(4) eILR(PAT) SC 1

विनिश्चय का समायोजन भी कर सके। ऐसी समस्त विगत और वर्तमान परिस्थितियों को ध्यान में रखना होगा और उनकी सतर्कता से देखरेख करनी होगी जिनका अधिसूचित तारीख को मतदान कराए जाने की बाबत सलाह देने के प्रश्न से संबंध है। यह एक निरंतर प्रक्रिया है जो मतदान पूरा होने के बाद ही समाप्त हो सकती है। तब तक निर्वाचन आयोग को ठोस कारणों से अपने विनिश्चय को परिवर्तित करने का अधिकार है। (पैरा 9)

यह परिस्थिति कि उच्च न्यायालय को तथ्य की जानकारी है इससे उसकी अपनी ही राय संविधान और विधि द्वारा किसी विनिर्दिष्ट प्रयोजन के लिए सम्यक रूप से नियुक्त किसी प्राधिकारी की राय का स्थान नहीं ले सकती। सार्वजनिक मुद्दों पर विभिन्न लोगों के विभिन्न मत होते हैं जिनमें प्राय: व्यापक प्रभेद होता है। ऐसा न्यायाधीशों के बीच भी है। कोई न्यायाधीश किन्हीं सार्वजनिक विषयों पर अपना दृष्टिकोण रखने का हकदार है, किंतु वह अपने व्यक्तिगत दृष्ट्रिकोण की छाप किसी विशेष अवधि में किसी विशेष् क्षेत्र की विधि और व्यवस्था की स्थिति जैसे प्रश्न पर विनिश्चय करते समय नहीं छोड़ सकता और यह अभिनिर्धारित नहीं कर सकता है कि निर्वाचन आयोग ने उस परिस्थिति का मूल्यांकन करने में गलती की है। (पैरा 10)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[1982]	(1982) 2 एस० सी० सी० 218 : **ए० के० एम० हसन उज्जमां** बनाम **भारत संघ** (A.K.M. Hassan Uzzman v. Union of India);	7, 8, 14, 15
[1974]	[1974] 3 एस० सी० आर० 743-744 : **मोहम्मद युनुस सलीम** बनाम **शिव कुमार शास्त्री** (Mohd. Yunus Saleem v. Shiv Kumar Shastri).	9

सिविल अपीली अधिकारिता : 1984 की सिविल अपील सं० 2182.

(1984 के रिट पिटीशन सं०——— में पंजाब- हरियाणा

न्यायालय के तारीख 17 अप्रैल, 1984 वाले निर्णय और आदेश के विरुद्ध विशेष इजाजत लेकर की गई अपील)।

अपीलार्थियों की ओर से — सर्वश्री एस० एस० रे और कृष्णमूर्ति स्वामी

प्रत्यर्थी की ओर से — सर्वश्री ए० के० सेन, के० जी० भगत, अपर महान्यायवादी एच० बी० सिंह, महाधिवक्ता हरियाणा राज्य, ए० ओ० सुब्बाराव, सी० वी० सुब्बाराव और आर० एन० पोद्दार

न्यायालय का निर्णय मुख्य न्यायाधिपति वाई० वी० चन्द्रचूड़ ने दिया।

मुख्य न्यायाधिपति चन्द्रचूड़—

हमने पंजाब-हरियाणा उच्च न्यायालय द्वारा तारीख 17 अप्रैल 1984 को पारित आदेश के प्रवर्तन को निलंबित करते हुए तारीख 18 अप्रैल, 1984 को एक अन्तरिम आदेश जारी किया था। उच्च न्यायालय ने अपने पूर्वोक्त आदेश द्वारा लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 की धारा 30, 56 और 150 के अधीन भारत के निर्वाचन आयोग द्वारा जारी और प्रकाशित की जाने वाली अधिसूचना को स्थगित कर दिया था। हमने यह निदेश दिया था कि इस बात पर विचार करने के लिए कि अन्तरिम आदेश को पुष्ट किया जाना चाहिए या नहीं विशेष इजाज़त पिटीशन प्रस्तुत किया जाए।

2. 28 फरवरी, 1984 को इस न्यायालय ने 1983 की सिविल अपील सं० 5501 में हरियाणा में 59—तौड़ू विधान-सभा निर्वाचन-क्षेत्र से निर्वाचित अभ्यर्थी के निर्वाचन को अपास्त करते हुए एक आदेश पारित किया। उस निर्णय के परिणामस्वरूप, हरियाणा राज्य विधान-सभा में उस निर्वाचन-क्षेत्र से एक स्थान रिक्त हो गया। 6 अप्रैल, 1984 को भारत के निर्वाचन आयोग ने हरियाणा राज्य के मुख्य सचिव को जो हरियाणा राज्य के मुख्य निर्वाचन अधिकारी भी हैं यह जानकारी देते हुए एक सन्देश भेजा कि आयोग ने तौड़ू निर्वाचन-क्षेत्र में उप-निर्वाचन कराने के लिए एक निश्चित कार्यक्रम नियत किया है। उस कार्यक्रम के

1984(4) eILR(PAT) SC 1

अनुसार लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 की धारा 150 के अधीन 18 अप्रैल, 1984 को एक अधिसूचना जारी की जानी थी। नामांकन पत्र भरने की अंतिम तारीख 25 अप्रैल, 1984 थी जबकि मतदान की तारीख 20 मई, 1984 थी। निर्वाचन आयोग ने आन्ध्र प्रदेश, कर्नाटक और पश्चिमी बंगाल की विधानसभाओं के अन्य 23 रिक्त स्थानों को भरने के लिए भी इसी प्रकार के कार्यक्रम नियत किए।

3. 7 अप्रैल, 1984 को निर्वाचन आयोग को हरियाणा सरकार के मुख्य सचिव का एक टेलैक्स सन्देश प्राप्त हुआ जिसमें हरियाणा सरकार ने यह निवेदन किया था कि उप-निर्वाचन लोक-सभा के साधारण निर्वाचनों के साथ कराया जाना चाहिए जो इस वर्ष के अंत में होंगे। 11 अप्रैल, 1984 को मुख्य सचिव ने मुख्य निर्वाचन आयुक्त को अपने पूर्वोक्त निवेदन को दोहराते हुए एक पत्र लिखा जिसके दो कारण दिए —

> (1) हरियाणा विधानसभा का अगला साधारण निर्वाचन मई, 1987 में होना है और चूंकि तौड़ू की रिक्ति अभी हाल में 28 फरवरी, 1984 को हुई है इसलिए उसके तत्काल भरे जाने की आवश्यकता नहीं है ;
>
> (2) उप-निर्वाचन को फिलहाल टाल देने से, समय, श्रम और व्यय की बचत होगी।

12 अप्रैल, 1984 को निर्वाचन आयुक्त ने मुख्य निर्वाचन अधिकारी को टेलैक्स सन्देश भेज कर यह जानकारी दी कि उन्होंने 24 रिक्त स्थानों में उप-निर्वाचन कराने के अपने कार्यक्रम को उनकी अपनी-अपनी अधिकारिता के भीतर कराने का निश्चय किया है। टेलैक्स सन्देश में विनिर्दिष्ट रूप से यह उल्लेख किया गया था कि आयोग ने विभिन्न राज्य सरकारों और उनके मुख्य निर्वाचन अधिकारियों से प्रस्तावित निर्वाचन कराए जाने के प्रश्न पर प्राप्त उनके उत्तर पर विचार कर लिया है। उसी तारीख अर्थात् 12 अप्रैल, 1984 को उस अधिसूचना की प्रतियां जो 18 अप्रैल, 1984 को हरियाणा के राजपत्र में प्रकाशित की जानी थीं हरियाणा के मुख्य निर्वाचन अधिकारी को भेज दी गई। उसी तारीख को एक पृथक संसूचना द्वारा आयुक्त ने समस्त राजनीतिक पार्टियों को निर्वाचन कराने के नियत कार्यक्रम की बाबत जानकारी दी। उसी तारीख को इस आशय की एक प्रेस-विज्ञप्ति भी जारी की गई।

4. हरियाणा के मुख्य सचिव ने 14 अप्रैल, को मुख्य निर्वाचन आयुक्त से मुलाकात की और व्यक्तिगत रूप से यह स्पष्ट किया कि किन कारणों से उनके द्वारा प्रस्तावित तौड़ू की सीट को भरने के लिए कराए जाने वाले उप-निर्वाचन के पक्ष में वे न तो सलाह दे सकते हैं और न ही उसे कराना संभव है। 16 अप्रैल, 1984 को मुख्य सचिव ने सरकार के दृष्टिकोण को दोहराते हुए मुख्य निर्वाचन आयुक्त को एक पत्र लिखा। पत्र में उन्होंने यह उल्लेख किया कि प्रस्तावित अवधि के दौरान निर्वाचन कराना इसलिए संभव नहीं होगा क्योंकि पड़ोसी पंजाब राज्य विधि और व्यवस्था की गम्भीर समस्याओं में से गुजर रहा था, यह कि हरियाणा राज्य तथा पंजाब में अकाली दल के बीच राज्य क्षेत्र के समायोजन और पानी के बंटवारे की बाबत भी विवाद है और यह कि अकाली दल उक्त विवाद को आतंकवादी क्रिया-कलाप को बढ़ावा देने के लिए प्रयोग कर रहा है और यह कि आतंकवादियों ने उच्च सरकारी पदाधिकारियों पर हमले किए हैं; यह कि हरियाणा में अनेक महत्वपूर्ण व्यक्तियों का जीवन खतरे में है, यह कि जिला मजिस्ट्रेट द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 144 के अधीन सार्वजनिक सभाओं पर रोक लगा दी गई है और यह कि राज्य में ऐसी स्थिति चल रही है कि कुछ महीनों तक निर्वाचन के प्रयोजन के लिए सार्वजनिक बैठकें करना संभव नहीं होगा। 17 अप्रैल को मुख्य निर्वाचन आयुक्त ने मुख्य सचिव के 16 अप्रैल वाले पत्र का उत्तर देते हुए यह कहा कि आयोग ने समस्त तथ्यों पर विचार करने के पश्चात् ही उप-निर्वाचन कराने का निर्णय लिया है, यह कि यह बात स्पष्ट नहीं है कि गुड़गांव स्थित तौड़ू निर्वाचन-क्षेत्र जो दिल्ली से लगभग 35 किलोमीटर दूर है और जो पंजाब से काफी दूर है, उस पर पंजाब की स्थिति का प्रभाव कैसे पड़ेगा और यह कि राजनीतिक पार्टियां जिन्हें प्रस्तावित निर्वाचन कार्यक्रम की बाबत सम्यक् जानकारी दे दी गई थी उन्होंने ऐसे मौके पर उप-निर्वाचन कराने का विरोध नहीं किया। उसी तारीख को मुख्य निर्वाचन आयुक्त ने पूर्वोक्त पत्र लिखा, हरियाणा सरकार ने पंजाब हरियाणा उच्च न्यायालय में एक रिट पिटीशन फाइल किया तथा एकपक्षीय आदेश प्राप्त कर लिया जिसे इस विशेष इजाज़त पिटीशन द्वारा आक्षेपित किया गया है।

5. हमने अपीलार्थी अर्थात् भारत के निर्वाचन आयोग की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान् काउन्सेल श्री सिद्धार्थशंकर रे तथा प्रत्यर्थी हरियाणा राज्य की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान् अपर महान्यायवादी की पर्याप्त स्पष्ट और अतिविस्तृत बहस सुनने के पश्चात् ही 18 अप्रैल

वाला अन्तरिम आदेश पारित किया। हमने पक्षकारों की बाकी बहस 19 अप्रैल को सुनी। प्रत्यर्थियों की ओर से श्री अशोक सेन उपस्थित हुए। क्योंकि मामले में सामान्य लोक महत्व का प्रश्न उठाया गया है इसलिए हम पिटीशनर को अपील करने के लिए विशेष इजाजत मंजूर करते हैं।

6. हम पक्षकारों द्वारा ऐसी स्थिति में एकपक्षीय आदेश प्राप्त करने की प्रचलित प्रथा का प्रायः अनुमोदन नहीं करते जब वे विरोधी पक्षकार को किसी विशेष असुविधा या प्रतिकूल प्रभाव के बिना प्रस्तावित कार्यवाही की पूर्व सूचना दे सकते थे। जब स्वयं लोक प्राधिकारी ही ऐसा करते हैं तब तो उसका अनुमोदन न करने का और मजबूत रहता है, किन्तु यहां पक्षकारों ने ईंट का जवाब पत्थर से दिया है। हरियाणा सरकार ने हरियाणा उच्च न्यायालय से ऐसी स्थिति में एकपक्षीय आदेश प्राप्त किया जब कि वह आशयित कार्यवाही की बाबत पूर्वसूचना निर्वाचन आयोग को आसानी से दे सकती थी। आयोग का संवैधानिक दृष्टि से निश्चित रूप है, उस से सुविधापूर्वक सम्पर्क किया जा सकता है तथा आधुनिकतम संचार तंत्र के माध्यम से वह आसानी से सम्पर्क हेतु उपलब्ध है। भारत के निर्वाचन आयोग ने भी 18 अप्रैल, 1984 को हरियाणा सरकार को यह जानकारी दिए बिना इस न्यायालय में समावेदन किया कि वह उच्च न्यायालय के आदेश की चुनौती देना चाहता है और उस आदेश को स्थगित करना चाहता है। हरियाणा राज्य को भी उतनी ही आसानी से अभिनिश्चित किया जा सकता है और सुगमतापूर्वक पहुंच की जा सकती है। हम यह आशा करते हैं कि अपेक्षाकृत छोटे पक्षकारों के मन में यह धारणा नहीं होनी चाहिए कि अपेक्षाकृत बड़े पक्षकार ऐसी कमियों के बावजूद अवसर पा सकते हैं। यदि यह तथ्य सामने नहीं होता कि इस मामले में विलंब की गुंजाइश नहीं थी तो अपीलार्थी द्वारा प्रत्यर्थी को प्रस्तावित कार्यवाही की पूर्वसूचना दिए बिना अंतरिम आदेश पारित करने में हमें संकोच होता।

7. जैसाकि पहले कहा जा चुका है निर्वाचन की प्रक्रिया को अग्रसर करने वाली अधिसूचनाएं 18 अप्रैल, 1984 को जारी की जाने वाली थी। उस दिन से एक दिन पूर्व राज्य सरकार ने जल्दबाजी में उच्च न्यायालय में निर्वाचन प्रक्रिया के स्थगन के लिए समावेदन कर दिया जिसे उच्च न्यायालय ने मंजूर कर लिया। इस न्यायालय ने पश्चिमी बंगाल के **ए० के० एम० हसन उज्जमां** बनाम **भारत संघ**[1] वाले निर्वाचन संबंधी मामले में यह

[1] (1982) 2 एस० सी० सी० 218.

अभिनिर्धारित किया था कि निर्वाचन प्रक्रिया का सन्निकट होना ऐसा तथ्य है जिससे उच्च न्यायालय द्वारा अपनी रिट अधिकारिता का प्रयोग करते हुए पारित किए जाने वाले आदेशों का मार्गदर्शन और नियंत्रण होना चाहिए। ऐसी प्रक्रिया जितनी सन्निकट हो उतनी ही उच्च न्यायालय द्वारा की जाने वाली ऐसी कार्यवाही के प्रति उसकी अनिच्छा होनी चाहिए जिसके परिणामस्वरूप, निर्वाचन स्थगित किया जा सकेगा। हमें यह जानकर खेद हुआ कि प्रस्तावित निर्वाचन के कार्यक्रम में हस्तक्षेप करने में अनिच्छा व्यक्त करना तो दूर रहा उच्च न्यायालय ने इतनी तत्परता से अंतरिम आदेश पारित किया कि उसके परिणामस्वरूप निर्वाचन अनिश्चितकाल के लिए स्थगित किया जा सकता है। इस बात पर विचार करते हुए कि निर्वाचन प्रक्रिया बहुत निकट थी उच्च न्यायालय को इसमें हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए था। उसके द्वारा बिना कारण बताए पारित आदेश से इस प्रश्न की बाबत कोई मदद नहीं मिलती कि क्या ऐसी असाधारण स्थिति उत्पन्न हो गई थी जिसमें आदेश को न्यायोचित ठहराया जा सकता था।

8. यह तथ्य कि निर्वाचन प्रक्रिया अत्यन्त सन्निकट थी यही एकमात्र ऐसा कारण है जिसके आधार पर हम यह कह सकते हैं कि उच्च न्यायालय को इस मामले में मदद करने से इंकार कर देना चाहिए था। हमने जो दृष्टिकोण अपनाया है उसके लिए अन्य कारण इस मामले में अन्तर्वलित विवाद की प्रकृति से ही उपलभ्य है। हरियाणा सरकार और मुख्य निर्वाचन आयुक्त के बीच जो मतभेद है वह इस प्रश्न पर केन्द्रित है कि क्या हरियाणा राज्य में कानून और व्यवस्था की स्थिति ऐसी है जिससे इस समय प्रस्तावित उप-निर्वाचन कराया जाना असमीचीन और अवांछनीय हो जाएगा। इस बात में कोई संदेह नहीं कि हरियाणा सरकार अपनी अधिकारिता के भीतर और अपने निर्णय के अधीन क्षेत्रों में विधि और व्यवस्था की स्थिति का मूल्यांकन करने के लिए बेहतर स्थिति में है। किन्तु किसी निश्चित समय पर निर्वाचन कराया जाना संभव और समीचीन है या नहीं इसका अंतिम विनिश्चय करने का अधिकार निर्वाचन आयोग को होना चाहिए। इस बात का सुझाव नहीं दिया गया है कि निर्वाचन आयोग अपने स्वनिर्णयाधिकार का प्रयोग मनमाने और असद्भावपूर्ण रीति में कर सकता है। मनमानीपूर्ण और असद्भावपूर्ण होने से लोक प्राधिकारियों द्वारा पारित आदेशों की वैधता और उनका प्रभाव नष्ट हो जाता है। इसलिए यह आवश्यक है कि वर्तमान मामले जैसे किसी विषय

1984(4) eILR(PAT) SC 1

पर जहां विधि और व्यवस्था की स्थिति से सम्बद्ध हो वहां निर्वाचन आयोग को चाहिए कि वह इस निष्कर्ष पर पहुंचने से पूर्व कि इस समय निर्वाचन कराने में कोई आपत्ति नहीं है वह राज्य सरकार तथा अन्य सम्बद्ध निकायों या प्राधिकारियों के दृष्टिकोण पर विचार करे। मामले के इस पहलू पर हरियाणा के मुख्य सचिव और मुख्य निर्वाचन आयुक्त के बीच हुए पत्र-व्यवहार से यह दर्शित होता है कि पश्चात्वर्ती ने प्रस्तावित कार्यक्रम के अनुसरण में तौड़ू निर्वाचन-क्षेत्र में उपनिर्वाचन कराने की बाबत विनिश्चय करते समय समस्त सुसंगत तथ्यों और परिस्थितियों पर विचार किया है। पंजाब में तथा कुछ हद तक हरियाणा में विधि और व्यवस्था की जो स्थिति है वह इतना गंभीर तथ्य है कि उसके आधार पर यह अभिनिर्धारित करना सहज है कि निर्वाचन आयोग उससे अवगत नहीं है। पंजाब और हरियाणा में विधि और व्यवस्था की स्थिति की बाबत जानकारी जो निर्वाचन आयोग को रखनी चाहिए के साधन के अतिरिक्त हरियाणा के मुख्य सचिव ने मुख्य निर्वाचन आयुक्त से व्यक्तिगत रूप से मिलकर इस तथ्य से उन्हें अवगत कराया कि हरियाणा सरकार का यह दृष्टिकोण क्यों है कि संसदीय निर्वाचन कराए जाने तक निर्वाचन को स्थगित कर दिया जाना चाहिए। हमें इस बात में कोई संदेह नहीं नजर आता कि इस विनिश्चय पर पहुंचने से पूर्व निर्वाचन आयोग ने सम्पूर्ण परिस्थिति के परिणाम को अपने ध्यान में रखा होगा। उसके पास इसकी बाबत आंकड़े मौजूद हैं यह अनुमान नहीं लगाया जा सकता कि उसने उसकी ओर से आंख बंद कर ली थी। इन परिस्थितियों में यह विनिश्चय करना उच्च न्यायालय की शक्ति के बाहर था कि पंजाब और हरियाणा राज्य में विधि और व्यवस्था की स्थिति ऐसी थी या नहीं जिसमें उप-निर्वाचन कराए जाने की अपेक्षा न हो या अनुमति न दी जाए। संक्षेप में ऐसी ही परिस्थिति में पश्चिमी बंगाल वाले निर्वाचन मामले के विनिश्चयाधार को अत्यन्त कठोरता के साथ लागू किया जा सकता है।

9. हम यहां यह उल्लेख करना चाहते हैं कि मुख्य निर्वाचन आयुक्त को इस बात की छूट है कि वह **मोहम्मद युनुस सलीम** बनाम **शिव कुमार शास्त्री**[1] वाले मामले में यथा अभिनिर्धारित रीति में अधिसूचित तारीख को मतदान कराए जाने की समीचीनता की बाबत अपने विनिश्चय का पुनर्विलोकन कर

---

[1] [1974] 3 एस० सी० आर० 743-744.

1984(4) eILR(PAT) SC 1

सकता है। वस्तुतः उसे न केवल अधिसूचना के अनुसार मतदान कराए जाने के अपने विनिश्चय पर पुनर्विचार करने का अधिकार है अपितु स्पष्टतः यह उसका कर्त्तव्य और बाध्यता भी है कि वह परिस्थितियों की निरंतर समीक्षा करता रहे जिससे कि परिस्थितियों की वास्तविकता के साथ अपने विनिश्चय का समायोजन भी कर सके। ऐसी समस्त विगत और वर्तमान परिस्थितियों को ध्यान में रखना होगा और उन पर नजर रखनी होगी जिनका अधिसूचित तारीख को मतदान कराए जाने की बाबत सलाह देने के प्रश्न से सम्बन्ध है। यह एक निरन्तर प्रक्रिया है जो मतदान पूरा होने के बाद ही समाप्त हो सकती है। तब तक निर्वाचन आयोग के लिए ठोस कारणों से विनिश्चय को परिवर्तित करने का अधिकार है। किसी विशेष समय में निर्वाचन कराने की समीचीनता या संभावना के प्रश्न का विनिश्चय करने के लिए किसी राज्य या उसके किसी भाग अथवा किसी पड़ोसी राज्य की विधि और व्यवस्था की स्थिति पर विचार किए जाने का प्रश्न बहुत महत्वपूर्ण है। हमारा दृढ़ विश्वास है कि मुख्य निर्वाचन आयुक्त जिन्हें संविधान द्वारा महत्वपूर्ण कर्त्तव्य और बाध्यताएं सौंपी गई है वह अपने उन कर्त्तव्यों और बाध्यताओं का निर्वहन इतनी उत्तरदायित्वपूर्ण रीति से करेंगे जो उनके द्वारा धारित उनके उच्च पद के अनुकूल है। यदि वे ऐसा करना ठीक समझते हैं तो उन्हें हरियाणा के मुख्य निर्वाचन अधिकारी से ऐसा विचार-विमर्श करना चाहिए था तथा एक बार फिर विभिन्न राजनीतिक पार्टियों के नेताओं से इस प्रश्न पर उनकी राय लेनी चाहिए कि नियत तारीख को मतदान कराया जाना संभव होगा या नहीं। निर्वाचन कराए जाने जैसे महत्वपूर्ण मुद्दे पर जो समस्त राजनीतिक समुदाय के लिए अत्यंत एवं तात्कालिक चिंता का विषय है उसे लेकर किसी लोक अधिकारी को मर्यादा का कोई प्रश्न नहीं बनाना चाहिए। राज्य की ओर से की गई बहस में इस प्रकार की आशंका की हल्की सी झलक मिली है। उस मुद्दे पर निर्वाचन आयोग के विनिश्चय से वास्तविकता, वस्तुपरकता और निर्गुटता की एक झलक मिलनी चाहिए।

10. इस बात पर जोर दिया गया कि पंजाब-हरियाणा उच्च न्यायालय को पंजाब में होने वाली घटनाओं और हरियाणा में उसके परिणाम-स्वरूप बरती जाने वाली सतर्कता की बाबत निष्पक्ष और स्पष्ट समझ होनी चाहिए जिससे निर्वाचन आयोग द्वारा अभी उप-निर्वाचन कराए जाने के विनिश्चय में हस्तक्षेप करने की उसकी कार्यवाही को न्यायोचित साबित किया जा सके। इस दलील के प्रथम भाग पर विवाद करने की आवश्यकता

नहीं है और उसे ठीक मान लिया जाना चाहिए। वस्तुत: इस देश का प्रत्येक नागरिक जो किंचित भी राजनीतिक रूप से जागरूक है उसे पंजाब की स्थिति और उसके पड़ौसी हरियाणा राज्य के शांत जनजीवन पर पड़ने वाले उसके प्रभाव की बाबत स्पष्ट विचार होंगे। किन्तु बहस का दूसरा भाग स्पष्ट नहीं है। यह परिस्थिति कि उच्च न्यायालय को तथ्य की जानकारी थी इससे उसकी अपनी ही राय संविधान और विधि द्वारा किसी विनिर्दिष्ट प्रयोजन के लिए सम्यक् रूप से नियुक्त किसी प्राधिकारी की राय का स्थान नहीं ले सकती। सार्वजनिक मुद्दों पर विभिन्न लोगों के विभिन्न मत होते हैं। जिनमें बहुधा व्यापक विरोधाभास होता है। न्यायाधीशों के बीच भी ऐसा ही है। कोई न्यायाधीश किसी सार्वजनिक विषय पर अपना दृष्टिकोण रखनें का हकदार है किन्तु प्रश्न यह है कि क्या वह अपने व्यक्तिगत दृष्टिकोण की छाप किसी विशेष अवधि में किसी विशेष क्षेत्र की कानून और व्यवस्था की स्थिति जैसे प्रश्न पर विनिश्चय करते समय छोड़ सकता है और यह अभिनिर्धारित कर सकता है कि निर्वाचन आयोग ने उस परिस्थिति का मूल्यांकन करने में गलती की है, हम ऐसा नहीं समझते।

11. इन कारणों से हम 18 अप्रैल, 1984 को अपने द्वारा पारित अंतरिम आदेश की पुष्टि करते हैं, इस अपील को मंजूर करते हैं और उच्च न्यायालय के 17 अप्रैल, वाले आदेश को अपास्त करते हैं। जब तक मुख्य निर्वाचन आयुक्त द्वारा अन्यथा निर्देश न किया जाए निर्वाचन का कार्यक्रम यथा पूर्व अधिसूचित कार्यक्रम के अनुसार होगा।

12. खर्चों की बाबत कोई आदेश नहीं होगा।

न्या० ठक्कर—

13. लोकतांत्रिक ढांचे में एक भी रिक्ति को शीघ्रतम तारीख को भरने के लिए उप-निर्वाचन कराया जाना सर्वथा अपेक्षित लक्ष्य है। यदि ऐसी परिस्थितियां भी हों और सद्भाविक रूप से यह पूर्व अनुमान लगाया जा सके कि उस रिक्ति को पूरा करने के लिए उप-निर्वाचन कराए जाने से न केवल निर्वाचन अधिकारियों, अभ्यर्थियों के ही जीवन के प्रति घोर खतरे की आशंका है बल्कि निर्वाचन संबंधी सभाओं को सम्बोधित करने वाले राजनैतिक नेताओं और मतदाताओं के प्रति भी है और इससे इतने गंभीर खतरे की आशंका हो गई है जो अन्य राज्यों में उप-निर्वाचन कराए जाने के

साथ-साथ निर्वाचन कराए जाने से होने वाले लाभ को नगण्य कर देता है तो क्या इस विषय पर निर्वाचन आयोग को गंभीर रूप से ध्यान नहीं देना चाहिए ? इतना ही नहीं, जबकि यह दर्शित किया जा चुका है कि नाजुक और विस्फोटक स्थिति को ध्यान में रखते हुए बहुत संभावना है कि जो स्थिति पहले से ही खराब चल रही है वह और बद्तर हो जाएगी ? इसके साथ ही जब यथा प्रस्तावित उप-निर्वाचन कराकर ही उसे प्राप्त किया जाना था तो उसी दिन अन्य राज्यों की भांति अन्य राज्यों के उप-निर्वाचनों के साथ ही कराया जाना ऐसा तथ्य है जिसका अपने आप में कोई महत्व या मूल्य नहीं है और यदि निर्वाचन आयोग बिना सम्यक् सावधानी बरते उस उप-निर्वाचन कार्यक्रम को ऐसी परिस्थितियों में कुछ समय के लिए टालने के लिए की गई प्रार्थना को नामंजूर कर देता है तो क्या ऐसा अंतरिम आदेश पारित करने में जिसके परिणामस्वरूप निर्वाचन निश्चित अवधि के लिए नहीं बल्कि कुछ ही दिनों के लिए जब तक कि पक्षकारों की सुनवाई नहीं की जाती आगे टल जाता है, उच्च न्यायालय ने कोई भूल की है ? क्या ऐसी परिस्थितियों में उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश इतना गंभीर है कि उच्च न्यायालय द्वारा उसकी पुष्टि या उसे बातिल किए जाने और अनुमति दिए जाने की बजाए और दूसरे पक्षकार को हेतुक प्रस्तुत करने का अवसर देने की बजाए इस न्यायालय को उसे अपास्त करने के लिए भारत के संविधान के अनुच्छेद 136 के अधीन दी गई अधिकारिता का आश्रय लेना चाहिए ? विशिष्ट रूप से जब परिणाम इससे अधिक गंभीर न हो अर्थात् उप-निर्वाचन अन्य उप-निर्वाचनों के साथ-साथ उसी तारीख को नहीं कराया जा सकता (ऐसा करने में कोई सार नहीं है) ।

14. यह कि उच्च न्यायालय को यह अधिकार है कि वह इस प्रभाव के आदेश या निदेश जारी कर सकता है कि यदि परिस्थिति इस बात की अपेक्षा करे तो किसी निर्वाचन को स्थगित किया जा सकता है । यही विधि विद्वान् मुख्य न्यायाधिपति की अध्यक्षता वाली पांच न्यायाधिपतियों से गठित सांविधानिक न्यायपीठ द्वारा भी घोषित की गई थी । **ए० के० एम० हसन उज्जमां** बनाम **भारत संघ**[1] तथा **लक्ष्मी चरण सेन और अन्य** बनाम **ए० के० एम० हसन उज्जमां और अन्य**[2] वाले मामले में 31 मार्च, 1982 वाले प्रभावकारी आदेश में जो निष्कर्ष अभिलिखित किया गया था वह निम्नलिखित रूप में था —

---

[1] (1982) 2 एस० सी० सी० 218.

[2] 1982 का निर्देश वाद सं० 2 निर्णय की तारीख 30-3-82.

1. "अंतरित मामला और उससे संबंधित अपीलों से एक महत्वपूर्ण प्रश्न उद्भूत हुआ है जिस पर सावधानीपूर्वक और निर्लिप्त भाव से विचार किए जाने की आवश्यकता है। इन मामलों की सुनवाई 4 दिन पूर्व, शुक्रवार, 26 तारीख को ही समाप्त हो गई थी। चूंकि निर्णय तैयार करने में कुछ समय लगेगा इसलिए इस आदेश द्वारा हम विवाद में अन्तर्वलित कुछ प्रश्नों पर अपना निष्कर्ष अधिकथित करना चाहते हैं —

(1) क्योंकि पिटीशन में निर्वाचन विधियों की शक्तिमत्ता की बाबत प्रश्न उठाया गया था इसलिए उच्च न्यायालय ने रिट पिटीशन पर विचार करने तथा प्रारंभिक आदेश जारी करने के लिए अपनी अधिकारिता के भीतर कार्यवाही की है। किन्तु ससम्मान यह कहा जा सकता है कि 12 फरवरी और 19 फरवरी, 1982 का अंतरिम आदेश पारित किया जाना तथा उन आदेशों की 25 फरवरी, 1982 के अपने आदेश द्वारा पुष्टि न्यायोचित नहीं थी। पहली बात तो यह है कि उच्च न्यायालय के समक्ष कोई ऐसी सामग्री ही नहीं थी जिसके द्वारा उन आदेशों को पारित करने की आवश्यकता पड़ती। रिट पिटीशन में किए गए अभिकथन स्पष्ट और सामान्य प्रकृति के हैं जिसके आधार पर कोई अनुतोष अनुज्ञात नहीं किया जा सकता था। दूसरी बात यह कि इस रिट पिटीशन पर विचार करने के लिए उच्च न्यायालय के पास समुचित निदेश देने के लिए अधिकारिता की कमी नहीं थी। किसी भी उच्च न्यायालय को संविधान के अनुछेद 226 के अधीन दी गई अपनी शक्तियों का प्रयोग करते हुए ऐसा कोई आदेश अंतरिम या अन्यथा पारित नहीं करना चाहिए जिसमें उप-निर्वाचन को जिसकी बाबत उसकी रिट अधिकारिता का युक्तियुक्त रूप से आश्रय लिया गया है, निर्वाचन को स्थगित करने की प्रवृत्ति या प्रभाव हो। निर्वाचन प्रक्रिया का सन्निकट होना ऐसा तथ्य है जिससे उच्च न्यायालय द्वारा अपनी रिट अधिकारिता का प्रयोग करते हुए पारित किए जाने वाले आदेश को मार्गदर्शन लेना चाहिए और उससे नियंत्रित होना चाहिए। ऐसी प्रक्रिया जितनी ही सन्निकट हो उतनी ही उच्च न्यायालय को कोई कार्यवाही करने या ऐसा कुछ निदेश देने

में अनिच्छुक होना चाहिए जिससे वह प्रक्रिया अनिश्चित समय के लिए स्थगित हो जाए और जिससे ऐसी स्थिति उत्पन्न हो जाए जिसमें किसी राज्य सरकार को संविधान के उपबंधों के अनुसार चलाया न जा सके। भारत लोकतंत्र का मरुद्यान है यह ऐसा निर्विवाद ऐतिहासिक सत्य है जो न्यायालयों से यह अपेक्षा करता है कि वे संविधान के अधीन दी गई अपनी असाधारण शक्तियों का प्रयोग करते समय योग्य राजनीतिवेत्ता की भांति कार्य करे।

(2) × × × ×

(3) × × × ×

2. इन कारणों से तथा उन कारणों से भी जो हम अपने निर्णय बाद में देंगे हम कलकत्ता उच्च न्यायालय में फाइल किए गए रिट पिटीशन को जो इस न्यायालय को निपटान के लिए स्थानान्तरित किया गया है खारिज करते हैं। कलकत्ता उच्च न्यायालय द्वारा पारित समस्त आदेश जिनके अन्तर्गत अंतरिम आदेश भी है इसके द्वारा अपास्त किए जाते हैं। 1982 की सिविल अपील सं० 739 से 742 का निपटान उस रिट पिटीशन के जिससे वे उद्भूत हुई है खारिज किए जाने के तथ्य के प्रकाश में हो गया माना जाएगा।

3. × × × ×

4. × × × ×"

क्या हसन वाले मामले से यह अभिप्राय निकलता है कि उच्च न्यायालय द्वारा ऐसा अंतरिम आदेश कभी भी पारित नहीं किया जा सकता ?

15. **हसन वाले मामले**[1] में अभिलिखित निष्कर्षों के सुसंगत उद्धरण इससे पूर्व प्रस्तुत किए गए हैं। संभवतः विनिश्चय का वास्तविक परिक्षेत्र और उसका निर्णयाधार तब तक नहीं जाना जा सकता जब तक सकारण निर्णय नहीं दे दिया जाता। आज की तारीख में यह अनुमान नहीं लगाया जा सकता कि **हसन वाले मामले**[1] में जबकि वस्तुतः निर्णय उद्घोषित किया जाएगा

[1] (1982) 2 एस० सी० सी० 218.

1984(4) eILR(PAT) SC 1

न्यायालय क्या विनिश्चय करेगी ? ऐसे बच्चे की आंखों के रंग या शेड की बाबत जो अभी मां के गर्भ में है कौन अंदाजा लगा सकता है ? किन्तु युक्तियुक्त रूप से यह कहा जा सकता है कि निम्नलिखित उद्धरण —

> "निर्वाचन प्रक्रिया का सन्निकट होना ऐसा तथ्य है जिससे उच्च न्यायालय द्वारा अपनी रिट अधिकारिता का प्रयोग करते हुए पारित किए जाने वाले आदेश को मार्गदर्शन लेना चाहिए और उससे नियंत्रित होना चाहिए। ऐसी प्रक्रिया जितनी ही सन्निकट हो उतनी ही उच्च न्यायालय को कोई कार्यवाही करने या ऐसा कुछ निदेश देने में अनिच्छुक होना चाहिए जिससे वह प्रक्रिया अनिश्चित समय के लिए स्थगित हो जाए और जिससे ऐसी स्थिति उत्पन्न हो जाए जिसमें किसी राज्य की सरकार को संविधान के उपबंधों के अनुसार, चलाया न जा सके।"

इस दृष्टिकोण की अपेक्षा करता है कि **हसन वाला मामला**[1] इस बात के लिए बाध्य नहीं करता कि किसी भी परिस्थिति में इस प्रकृति का कोई अंतरिम आदेश किया ही नहीं जा सकता। यदि ऐसी स्थिति नहीं होती तो न्यायालय यह कभी नहीं कहता (1) कि निर्वाचन प्रक्रिया की सन्निकटता एक ऐसा तथ्य है जिससे पारित किए जाने वाले आदेश का सम्पूर्ण मार्गदर्शन और नियंत्रण होना चाहिए। (इसका अभिप्राय यह है कि जिस समय ऐसे आदेश पारित किए जाएं उस समय इस तथ्य पर सम्यक् रूप से विचार कर लिया जाए) और (2) यह कि "जितनी ही सन्निकट प्रक्रिया हो उतनी ही उच्च न्यायालय को कोई कार्यवाही करने या कोई ऐसी कार्यवाही किए जाने का निदेश देने के प्रति अनिच्छुक रहना चाहिए जिससे प्रक्रिया अनिश्चितकाल के लिए स्थगित हो जाए" (इसका अभिप्राय यह है कि जब निर्वाचन सन्निकट हों तो इसे अनिच्छापूर्वक किया जाना चाहिए)। विधि संबंधी पूर्वोक्त कथन "जो साधारण निर्वाचनों" के संदर्भ में किया गया है उससे यह अपेक्षा नहीं की जाती कि **हसन वाले मामले**[1] में अपनाया गया दृष्टिकोण इस बात के लिए यह व्यादेश देता है कि कोई निर्वाचन कार्यक्रम, भले ही वह उप-निर्वाचन का मामला क्यों न हो, जिसमें उच्च न्यायालय से अपनी अधिकारिता का प्रयोग करने के लिए समावेदन किया गया है, चाहे जो भी स्थिति हो और चाहे जो भी परिस्थितियां विद्यमान हों, स्थगित नहीं किया जा सकता।

[1] (1982) 2 एस० सी० सी० 218.

इसलिए इस आधार-वाक्य पर आगे कार्यवाही करना अयुक्तियुक्त नहीं होगा कि **हसन वाले मामले**[1] के अनुसार भी न्यायालय को ऐसा अंतरिम आदेश जारी करने की शक्ति है जिसका प्रभाव निर्वाचन को स्थगित करना होगा, किन्तु इसका प्रयोग कभी-कभार (अनिच्छापूर्वक) किया जाना चाहिए। विशेष रूप से जब आदेश के परिणामस्वरूप लोकतांत्रिक रूप से निर्वाचित लोकप्रिय सरकार को स्थापित किया जाना हो। **हसन वाले मामले**[1] के प्रवर्तनकारी आदेश से उद्धृत भाग जो कुछ समय पहले प्रकाश में लाया गया था उसमें "निर्वाचन की सन्निकटता" और "निदेश जिसके आवश्यक परिणामस्वरूप विधायी निकायों का निर्वाचन अनिश्चितकाल के लिए स्थगित हो जाएगा जो हमारे संविधान के लोकतांत्रिक कृत्यों के सारभूत तत्व हैं"। इससे इस बात पर संदेह करने के लिए कोई गुंजाइश नहीं रह जाती कि ये अवलोकन भारत के संविधान के अनुच्छेद 172 में दिए गए विधानमंडल की अवधि के अवसान के संदर्भ में सामान्य निर्वाचन के संदर्भ में होने वाले उस विधानमंडल के तथा उसके परिणामस्वरूप किए गए थे। ऐसा इसलिए भी होना चाहिए क्योंकि अवधि के अवसान पर विधानमंडल अपने आप विघटित हो जाएगा और नए विधानमंडल का चुनाव करना होगा। इसी संदर्भ में (अनुमानतः) "निर्वाचन की सन्निकटता" के प्रति निर्देश किया गया है। इस प्रकार के उप-निर्वाचन में जैसा कि हमारे समक्ष है, "ऐसी सन्निकटता" या निर्वाचनों के "अनिश्चितकालीन स्थगन" का प्रश्न नहीं है जिससे लोकतांत्रिक रूप से निर्वाचित सरकार को स्थापित करने से रोका जा सके। यह मामला किसी ने नहीं उठाया है कि दलगत स्थिति ऐसी थी कि इस रिक्त स्थान के लिए कराए जाने वाले निर्वाचन के परिणामस्वरूप किसी-न-किसी रूप में बहुमत इधर या उधर हो जाएगा। किसी कपटपूर्ण हेतु का संकेत नहीं किया गया। इसलिए उच्च न्यायालय द्वारा इस अनुमान पर कार्यवाही किया जाना न्यायोचित नहीं है कि उसे ऐसा करने की शक्ति प्राप्त है। क्या उच्च न्यायालय द्वारा पारित अंतरिम आदेश को भारत के संविधान के अनुच्छेद 136 की अधिकारिता का प्रयोग करते हुए उलट देने में कोई गुणागुण है ?

16. जो एकमात्र प्रश्न उद्भूत होता है वह यह है कि क्या वर्तमान मामला ऐसा मामला है जिसमें उच्च न्यायालय को अंतरिम आदेश नहीं मंजूर करना था। यह अनुभव किया जाना चाहिए कि यदि उच्च न्यायालय

---

[1] (1982) 2 एस० सी० सी० 218.

1984(4) eILR(PAT) SC 1

ने यह आदेश अनुज्ञात नहीं किया होता और निर्वाचन आयोग 18 अप्रैल, 1984 को या उससे पूर्व उच्च न्यायालय में उपसंजात न होता तो उच्च न्यायालय संभवत: आदेश पारित करने की शक्ति खो देता चाहे उसके लिए कितना भी न्यायौचित्य क्यों न होता क्योंकि "निर्वाचन-प्रक्रिया" "वस्तुत:" आरंभ हो गयी होती। तब क्या उस समय आदेश पारित करने के लिए उच्च न्यायालय को दोषी कहा जाता जैसा कि वर्तमान मामले जैसी अभूतपूर्व स्थिति में उत्पन्न हुआ है। एक ओर तो ऐसा प्रतीत होता है कि निर्वाचन आयोग पूरे तौर पर बिना राष्ट्रीय नेताओं के कार्य में संलग्न अधिकारियों और मतदाताओं के जीवन और सुरक्षा की आशंका के प्रति स्वभाविक आशंका के प्रति जो सार्वजनिक सभाओं को सम्बोधित करते, अभ्यर्थियों का निर्वाचन .... विभिन्न राजनीतिक पार्टियों के राष्ट्रीय नेताओं के जीवन की बाबत दी गई खुल्लमखुल्ला धमकियों के सामने यह खतरा और भी गंभीर हो गया। अधिक क्या कहा जाए निर्वाचन आयोग ने इस परिस्थिति के प्रति भी पूर्ण अज्ञानता दर्शित की कि जिस निर्वाचन क्षेत्र में मतदान होने जा रहा है वहां दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 144 के अधीन सार्वजनिक सभाओं पर प्रतिषेध लगा है। दूसरी ओर, स्थगन अनुज्ञात करने का एकमात्र परिणाम यह होता कि यदि निर्वाचन आयोग न्यायालय के समक्ष (यह हेतुक दर्शित करने के अंतरिम आदेश को क्यों न आत्यन्तिक बना दिया जाए) 18 अप्रैल, 1984 को या उससे पूर्व उपसंजात नहीं होता जो कि निर्वाचन कार्यक्रम उद्घोषित करने वाली अधिसूचना जारी किए जाने की अधिसूचित तारीख थी तो निर्वाचन कुछ दिनों के लिए स्थगित हो जाता। निर्वाचन आयोग, विशेष इजाज़त लेकर, इस न्यायालय में वर्तमान अपील फाइल करने की बजाए, उच्च न्यायालय के समक्ष जा सकता था और स्थगन आदेश को समय के भीतर बातिल करा सकता था। निर्वाचन आयोग को यह महसूस करने में विफल नहीं होना चाहिए था कि आक्षेपित आदेश द्वारा यदि स्थगन आदेश को तत्काल न सही किन्तु कुछ दिनों के बाद ही बातिल करा दिया जाता तो भी उससे परिणामस्वरूप निर्वाचित सरकार को स्थापित किया जाना स्थगित न हो जाता क्योंकि यह मात्र एक उप-निर्वाचन था जो केवल एक ही स्थान के लिए था और जिसका कोई महत्व नहीं था। अधिक से अधिक यही होता कि 'उसी दिन' अन्य राज्यों में कराए जाने वाले उप-निर्वाचनों के साथ वह उप-निर्वाचन नहीं कराया जा सकता। निर्वाचन आयोग यह दर्शित करने में असफल रहा कि यदि उसी विशेष तारीख को वह उप-निर्वाचन न कराया जा सकता तो उससे संभवत: क्या हानि हो सकती थी।

यदि उच्च न्यायालय का प्रथमदृष्टया यह समाधान हो गया था कि निर्वाचन आयोग महत्वपूर्ण प्रश्नों पर विचार करने में असफल रहा और उसे ऐसा प्रतीत होता कि उसने परिणामों पर विचार किए बिना कार्यवाही की तथा राज्य सरकार और साथ ही हरियाणा के मुख्य निर्वाचन अधिकारी की प्रार्थना को मनमाने ढंग से अस्वीकृत कर दिया तो उच्च न्यायालय स्थगन आदेश क्यों न अनुज्ञात करता और ऐसी वस्तुस्थिति में क्या इस न्यायालय को हस्तक्षेप करना चाहिए ? निर्वाचन आयोग के विद्वान् काउंसेल ने बार-बार उनसे निवेदन किए जाने पर भी न तो 18 तारीख को फाइल किए गए शपथ पत्र से या 19 तारीख को फाइल किए गए अतिरिक्त शपथ पत्र से यह दर्शित कर सके कि आयोग द्वारा पूर्वोक्त तथ्यों पर विचार कर लिया गया था। ऐसा नहीं कहा गया है कि ये तथ्य विद्यमान नहीं हैं या किसी कपटपूर्ण हेतु से राज्य सरकार द्वारा उनका अन्वेषण किया गया है। निर्वाचन आयोग द्वारा फाइल किए गए शपथ-पत्र की अन्तर्वस्तुओं से यह प्रकट होता है कि वह इससे पूर्व प्रगणित समस्त सुसंगत तथ्यों से पूरी तरह उदासीन रहा। यह दर्शित करने के लिए कोई भी बात नहीं है कि उसके ध्यान में कोई एक भी तथ्य मौजूद रहा हो। निर्वाचन आयोग ने न्यायालय को यह नहीं बताया कि क्यों और कैसे इन समस्त तथ्यों को नगण्य समझा गया। इस बात के लिए कोई उल्लेख नहीं किया गया कि निर्वाचन आयोग ने कैसे यह समझ लिया कि इन समस्याओं पर काबू पाया जा सकता है। निर्वाचन आयोग ने किस सम्मोहन शक्ति से अपना यह समाधान कर लिया कि ऐसी स्थिति में भी जबकि निर्वाचन-क्षेत्र में सार्वजनिक सभाओं पर प्रतिबंध लगा हुआ है। कैसे मुक्त और निष्पक्ष निर्वाचन कराए जा सकते हैं ? निर्वाचन आयोग के तर्क की किस प्रक्रिया द्वारा यह समाधान हो गया कि ऐसी स्थिति में भी मुक्त रूप से निर्वाचन कराए जा सकते हैं जहां निर्वाचन के लिए खड़ा होना या निर्वाचन का प्रचार करना ही अभ्यर्थी के लिए घातक हो सकता है और इतना ही नहीं, मतदाता भी मत देने से भयभीत होंगे। यदि निर्वाचन आयोग के ध्यान में ऐसा कोई विचार था जिससे कि कठिनाइयों पर काबू पाया जा सके और समस्या का समाधान हो जाए तो उसने इस विषय पर अपने विचार प्रकट नहीं किए। निर्वाचन आयोग के पास सम्भवतः इसका सही उत्तर हो सकता है किन्तु इस पहलू पर आयोग द्वारा और उसके काउंसेल द्वारा भी मौन रहना ही इसका एकमात्र उत्तर है और लगता है कि उनका दृष्टिकोण यही था कि "मैं अपना काम जानता हूं और न्यायालय को इससे कुछ भी लेना-देना नहीं है।" आयोग के विद्वान् काउंसेल द्वारा जो कुछ भी

1984(4) eILR(PAT) SC 1

कहा गया है वह यह है कि प्रत्येक बात पर विचार किया गया था ("प्रत्येक बात" पद की अन्तर्वस्तुओं को प्रकट किए बिना) । काउंसेल ने यह कहते हुए कि शपथ-पत्र तैयार करने के लिए घोर परिश्रम किया जाएगा, अन्यत्र उपस्थित होने का अभिवाक् लिया किन्तु ऐसी स्थिति में प्रत्येक महत्वपूर्ण बात पर ध्यान केन्द्रित किया जाना चाहिए था और मामले के सार-तत्व की उपेक्षा नहीं की जानी थी या भूलना नहीं था और यदि उस पर ध्यान नहीं दिया गया तो, इसका अनिवार्य निष्कर्ष यह होगा कि निर्वाचन आयोग ने आधारभूत समस्या को सम्यक् महत्व तथा उस पर बल नहीं दिया और गंभीर समस्या के प्रति उसने गंभीरतापूर्वक विचार नहीं किया ।

17. यह तथ्य स्थापित हो गया है कि हरियाणा के मुख्य सचिव और मुख्य निर्वाचन अधिकारी ने 14 अप्रैल, 1984 से पूर्व किसी समय मुख्य निर्वाचन आयुक्त को वर्तमान स्थिति से व्यक्तिगत रूप से अवगत कराया था । निर्वाचन आयोग ने अपने पिटीशन में या अपने अतिरिक्त शपथ-पत्र में इस तथ्य को प्रकट नहीं किया है न ही निर्वाचन आयोग ने हमें बताया कि उस बैठक में क्या बातचीत हुई । निर्वाचन आयोग इस न्यायालय के प्रति भी स्पष्टवादी नहीं रहा । इसमें कोई संदेह नहीं है कि मुख्य निर्वाचन आयुक्त एक उत्तरदायित्वपूर्ण पद पर हैं । किन्तु यदि समस्त सुसंगत तथ्यों के प्रति जागरूक रहने में वे विफल रहे और यदि वे समस्या के केन्द्र बिन्दु की ओर ध्यान नहीं दे सकें तो ऐसा नहीं है कि वे उससे प्रभावित नहीं हो सकते या अपना विनिश्चय या कृत्य करने में मनमानापन नहीं बरत सकते । यह निस्संदेह रूप से सत्य है कि सैद्धांतिक रूप से निर्वाचन आयोग इसके बावजूद भी मतदान स्थगित कर सकता था यदि उसने ऐसा सोचा होता । किन्तु क्या ऐसी असाधारण परिस्थिति में न्यायालय को उदासीन बने रहना चाहिए और राष्ट्र को किसी व्यक्ति-विशेष की दया पर छोड़ देना चाहिए, चाहे कितने ही ऊंचे पद पर क्यों न हो । ऐसी स्थिति में जबकि यह स्पष्ट हो कि उसने अपने आपको एकांत में छुपा लिया और परिस्थिति की वास्तविकता के प्रति आंखें बंद कर ली हैं और समस्या की गंभीरता से ध्यान हटा लिया है । न्यायालय निश्चित रूप से अपना यह समाधान कर सकता है कि क्या निर्वाचन आयुक्त ने अपनी आंख, कान और मस्तिष्क को खुला रखा था और क्या वे यह दर्शित कर सके कि समस्त सुसंगत तथ्यों को जिसके अन्तर्गत आसन्न जोखिम के मुकाबले क्या लाभ होना था उन्होंने ध्यान में रखा । यदि ऐसा किया जाना दर्शित नहीं किया

1984(4) eILR(PAT) SC 1

गया जैसा कि वर्तमान मामले में है तो उनका विनिश्चय दूषित है और न्यायालय को अपने आपको असमर्थ नहीं समझना चाहिए इसलिए आक्षेपित आदेश पारित करके उच्च न्यायालय ने सर्वथा न्यायोचित किया। तद्नुसार, अपील खारिज की जाती है।

अपील मंजूर की गई।

द्वि०/भू०